Shikshan Sanshodhan : Journal of Arts, Humanities and Social Sciences ISSN(o): 2581-6241
Monthly, Peer-Reviewed, Refereed, Indexed Journal Impact Factor: 7.384
Volume - 8, Issue - 3, March - 2025

DOIs:10.2018/SS/202503008 --:-- Research Paper / Article / Review

भारतीय ज्ञान परंपरा के परिप्रेक्ष्य में भारत की लोकसंस्कृति में अंतर्निहित जीवनदृष्टि

[1] **विमल कुमार**, [2] **डॉ. कीर्ति प्रजापति**

[1] असिस्टेंट प्रोफेसर, बी एड / एम. एड. विभाग एम. जे. पी. रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली , उ. प्र. (भारत)

[2] असिस्टेंट प्रोफेसर, बी. एड. / एम. एड. विभाग एम. जे. पी. रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली

Email – vkedu18@gmail.com , keertiprajapati@gmail.com,

शोध सार : विश्व की तमाम सभ्यताओं के जीवन एवं सृष्टि के बारे में अपने विचार हैं, किसी भी विचार को छोटा-बड़ा न बताते हुए यह शोध पत्र भारत के विचार को समझने का प्रयत्न है| प्रस्तुत शोधपत्र के विषय 'भारतीय ज्ञान परंपरा के परिप्रेक्ष्य में भारत की लोकसंस्कृति में अंतर्निहित जीवनदृष्टि' में भारत की ज्ञान परंपरा के अंतर्गत आने वाले विचारों का अध्ययन किया गया है |

वर्तमान वैश्विक परिवेश में अनेकों प्रकार की मानवीय, पर्यावरणीय एवं मूल्यपरक समस्याएं व्याप्त हैं | भारत की ज्ञान परंपरा का चिन्तन उन सभी मुद्दों पर क्या राय रखता है? भारत की ज्ञान परंपरा के विचार वर्तमान समय में कितने सम्यक एवं समीचीन हैं? जीवन के प्रति दृष्टिकोण में भारत की ज्ञान परंपरा के कौन -कौन से पक्ष भारत के आमजन-मानस के लोकव्यवहार में दृष्टिगोचर होते हैं ? भारत की लोकसंस्कृति में अन्तर्निहित पारिवारिक जीवन मूल्य, विश्वबंधुत्व मूल्य, एवं पर्यावरण के प्रति दृष्टिकोण कौन से है ? इन सभी प्रश्नों के सम्यक उत्तर प्राप्त करने की अपेक्षा में यह शोध कार्य किया गया है |

शोधकार्य गुणात्मक प्रकार का है तथा इसके लिए प्राथमिक, द्वितीयक एवं तृतीयक स्रोतों का सहयोग लिया गया है | भारतीय ज्ञान परंपरा के ग्रन्थ, ग्रंथों पर आधारित रचनाएँ तथा विषय से सम्बंधित अन्य प्रकाशित शोधोपत्रों आदि के माध्यम से इस शोध कार्य को आगे बढाया गया है|

वर्तमान के मुद्दों एवं विचारों में सकारात्मक परिमार्जन करते हुए मानव कल्याण के लिए आवश्यक विचारों को परिलक्षित करने में ये शोध महतवपूर्ण सिद्ध होगा | शोधकार्य के निष्कर्ष हमें भारत की ज्ञान परंपरा के विविध पहलुओं को समझने में सहायक होंगे तथा समाज जीवन के भारतीय आदर्शों को प्रतिबिंबित करेंगे |

कंजी शब्द : भारतीय ज्ञान परंपरा, वसुधैव कटम्बकम, जीवन मल्य, भारतीय सामाजिक लोकव्यवहार |

1. प्रस्तावना :

भारत वह देश है जिसने सम्पूर्ण विश्व को अपने आध्यात्मिक ज्ञान एवं जीवन शैली से मानव जीवन को समस्त जगत के लिए कल्याणकारी तरीके से जीने का विचार प्रदान किया है | दुनिया में अलग-अलग प्रकार की सभ्यताओं का विकास हुआ और सभी ने अपने लिए एक समाज का निर्माण किया, उस समाज के जीवन मूल्यों, परम्पराओं का विकास किया तथा जीवन जीने के अपने दर्शन का अनुसरण किया | इस मायने में प्रत्येक राष्ट्र की सामाजिक संरचना में एक वैशिष्ट्य है, भले ही उस समाज में सांस्कृतिक एवं सामाजिक विभिन्नता हो या न हो परन्तु वह शेष विश्व के राष्ट्रों से अपनी लोकसंस्कृति और जीवन मूल्यों के मामले में निश्चित ही भिन्न होगा |

जब हम भारतवर्ष के बारे में सोचकर भारतीय ग्रंथों एवं इतिहासवेत्ताओं के विचारों का गहराई से अध्ययन करते हैं तो ज्ञात होता है कि शेष विश्व की तुलना में भारत में बहुत अधिक विविधता पायी जाती है | एक विविधता तो वह होती है जो बाहरी व्यक्तियों , आक्रमणकारियों या विदेशी शासकों के कारण उत्पन्न होती है तथा दूसरी विविधता वह होती है जो उस देश के ही भौगौलिक एवं स्थानीय लोकव्यवहार के कारण होती है | भारत के सन्दर्भ में दूसरी मान्यता अधिक स्वीकार्य है कि यहाँ की विविधता यहाँ की सभ्यता की एक अतिविशिष्ट विशेषता है, जिस कारण यहाँ ऐसे जीवन मूल्य और लोकसंस्कृति विकसित हुई जिसके एक-एक सूत्र वाक्य का उद्देश्य मानव जीवन को श्रेष्ठता की पराकाष्ठा तक ले जाना है |

भारत की ज्ञान परंपरा के अंतर्गत वेद साहित्य का विश्लेषण एवं विवेचन करने के पश्चात हम इस विषय में और अधिक सम्यक ज्ञान प्राप्त करने में सफल होंगे |

शोधपत्र के शीर्षक से विषय का प्रतिपादन यदि हम करना प्रारंभ करें तो लोकसंस्कृति के बारे में विचार करना होगा, लोकसंस्कृति में दो शब्द हैं उनमें पहला है लोक अर्थात संसार और संस्कृति | लोक से तात्पर्य इस चराचर जगत में उपस्थित सभी चीज़ों से है जिसमें किसी का भी व्यक्तिगत कुछ नहीं रहता जो कुछ भी है सब सामूहिक है, व्यक्ति कैसा भी हो कुलीन हो, दीन-हीन हो, अभिजात्य हो किसी जाति वर्ग, धर्म सम्प्रदाय का हो उसका व्यक्तिगत कुछ भी नहीं है, उसका जीवन तो व्यक्तिगत है परन्तु अपने आसपडोस, एवं शेष समाज के मध्य पारस्परिक सम्पर्क के बिना उसका कोई अस्तित्व नहीं है हाँ यह बात भी सत्य है कि लोक जड़ नहीं है उसमे निरंतर परिवर्तन होते रहते हैं जिससे मनुष्य भी प्रभावित होता है|

संस्कृति से तात्यपर्य किसी समाज की मान्यताएं, व्यवहार तथा किसी स्थान पर रहने वाले लोगों के द्वारा विकसित की गयी प्रणाली से है, संस्कृति सीखी जाती है, साझा की जाती है, तथा लगभग एक जैसे तत्वों से मिलकर बनती है और ये लगातार गतिमान रहती है, समय के अनुसार कुछ आवश्यक परिवर्तनों को स्वीकार तो करती है, परन्तु अपने मूल तत्वों को कदापि नहीं छोड़ती है | समग्रता है जिसमें ज्ञान, विश्वास, कला, नैतिकता, कानून, रीति-रिवाज तथा समाज के सदस्य के रूप में मनुष्य द्वारा अर्जित अन्य क्षमताएं और आदतें सम्मिलित होती हैं |

संस्कृति को परिभाषित करते हुए एडवर्ड बर्नेट टायलर ने बताया- 'संस्कृति या सभ्यता अपने व्यापक नृजातीय अर्थ में एक जटिल समग्र है जिसमें ज्ञान, आस्था, कला, नैतिकता, कानून, प्रथा, तथा मनुष्य के समाज के सदस्य के रूप में होने के फलस्वरूप प्राप्त अन्य क्षमताएं तथा आदतें शामिल हैं |'

वर्तमान के बदलते हुए परिवेश एवं वैचारिक द्वंद्व के समय में यदि हम भारत की ज्ञान परंपरा के परिप्रेक्ष्य में लोकसंस्कृति में अंतर्निहित जीवन मूल्यों के बारे में चिंतन करें तो निम्न आयामों पर विचार करने की आवश्यकता प्रतीत होती है, जिन पर विस्तार पूर्वक भारतीय ज्ञान परंपरा में वर्णन प्राप्त हो सकता है |

2. शोध के उद्देश्य:

1. भारतीय ज्ञान परंपरा के परिप्रेक्ष्य में भारत की लोकसंस्कृति में अंतर्निहित पारिवारिक जीवन मूल्यों का अध्ययन करना |
2. भारतीय ज्ञान परंपरा के परिप्रेक्ष्य में भारत की लोकसंस्कृति में अंतर्निहित विश्व बंधुत्व संबधी जीवन मूल्यों का अध्ययन करना |
3. भारतीय ज्ञान परंपरा के परिप्रेक्ष्य में भारत की लोकसंस्कृति में अंतर्निहित पर्यावरण के प्रति जीवनदृष्टि का अध्ययन करना|

3. शोध विधि: प्रस्तावित अध्ययन **गुणात्मक** प्रकार का है।

अध्ययन के स्रोत:

प्राथमिक स्रोत: मूलग्रन्थ व दस्तावेज

द्वितीयक स्रोत - मूल ग्रंथों पर आधारित प्रमुख शोध-ग्रन्थ

तृतीयक स्रोत - प्रमुख शोध-ग्रंथों पर आधारित शोध लेख

प्रस्तावित शोध में गुणात्मक प्रविधि के अनुरूप गुणात्मक प्रकार के प्रदत्तों का संकलन किया गया है , जिसके निष्कर्ष उल्लिखित है|

विश्लेषण:

भारतीय जनमानस का पारिवारिक और सामाजिक जीवन और उसकी मान्यताएं: गोस्वामी तुलसीदास जी ने अपने ग्रन्थ श्री रामचरितमानस में लिखा 'ईश्वर अंश जीव अविनाशी' अर्थात इस चराचर जगत के सम्पूर्ण जीव ईश्वर का ही अंश हैं, और आत्मा अजर-अमर है अर्थात मनुष्य और परमात्मा किसी मायने में एक दूसरे से अलग नहीं हैं| भारत की ज्ञान परंपरा का ये विचार भारत के सामाजिक जीवन को उच्च श्रेणी का बनाता हैं| गोस्वामी जी मनुष्य जन्म की सार्थकता को बताते हुए लिखते हैं 'बड़े भाग मानुष तन पावा' अर्थात मनुष्य के रूप में जन्म लेना ये सभी का सौभाग्य नहीं है, केवल भाग्यवान जीवों को ही ये अवसर मिलता है अतः मनुष्य को अपना जीवन मानवीय आदर्शों के अनुरूप बिताना चाहिए |

गृहस्थ जीवन स्त्री और पुरुष दोनों के संयुक्त प्रयास से चलता है दोनों में से कोई भी अकेला स्वयं में पूर्ण नहीं है, बल्कि दोनों ही समान सत्ताएं हैं और दोनों एक दूसरे के पूरक हैं, भारत की परिवार परम्परा में विश्व की सर्वश्रेष्ठ परंपरा है, हमारे यहाँ स्त्रियों को परिवार की सबसे महत्वपूर्ण कड़ी बताया गया है |

नारी को भारत की विचार परंपरा में सृजन का स्वरुप बताया गया है, हमारे यहाँ कहा गया है-

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः, यत्र तु एताः न पूज्यन्ते तत्र सर्वाः क्रिया अफलः

अर्थात जहाँ नारियों की पूजा होती है वहां देवता निवास करते हैं| इस से यह सिद्ध होता है कि भारतवर्ष की ज्ञान परंपरा में नारी सदा पूज्या रही है, स्वयंवर की प्रथा यह बताती है कि अपने योग्य जीवन साथी चुनने की स्वतंत्रता भारत वर्ष की नारियों को हमेशा रही है |

हमारी ज्ञान परम्परा में स्त्री के पोषण के सम्बन्ध में कहा गया है-

पूजनीया महाभागा:पुण्याश्च गृहदीप्त्ययः |
स्त्रियः श्रियो गृहस्योक्तास्मादरक्षयाविशेषतः ||

अर्थात स्त्रियाँ घर की लक्ष्मी हैं, ये सौभाग्य रूप हैं, ये पूजा के योग्य पवित्र हैं तथा घर की शोभा हैं | इनका रक्षण, पोषण विशेष रूप से करना चाहिए |

हमारी ज्ञान परंपरा में ये भी कहा गया है-

पत्नी मूलं गृहं पुंसा यदिछन्दानुवर्तिनी |
तथा धर्मार्थ कामानां त्रिवर्ग फलमश्नुते ||

इसका आशय है कि गृहस्थ आश्रम का मूल पत्नी है | उसका निर्माण ही इसके लिए हुआ है | धर्म, अर्थ, काम इन तीनों की प्राप्ति पत्नी के द्वारा की जा सकती है |

इन सभी वेदोक्तियों का विश्लेषण स्पष्ट है कि भारतवर्ष में स्त्री मात्र भोग की वस्तु नहीं है बल्कि स्त्री को अत्यंत पवित्र एवं घर की उन्नति का कारण माना गया है

हमारे भारत की परंपरा में स्पष्ट कहा गया है-

मातृवत परदारश्चपरद्रव्याणि लोष्ठवत |
आत्मवत सर्वभूतानि यः पश्यन्ति स पंडितः ||

जो परायी स्त्री को माता के समान, पराया धन धूल के समान और सभी प्राणियों को समान समझता है, वास्तव में वही विद्वान है |

इसी प्रकार आदर्श जीवन मूल्यों का परिवार में किस तरह से प्रभाव रहा है वह भी हमको हमारी परंपरा से विकसित जीवन मूल्यों से प्रकट होता है, महर्षि वाल्मीकि रचित रामायण में इस के बहुत से उदाहरण दृष्टिगोचर होते हैं |

नाहं जानामि केयूरे नाहं जानामि कुण्डले |
नूपुरेत्वभिजानामि नित्यं पादाभिवन्दनात||

वाल्मीक रामायण के इस श्लोक के माध्यम से लक्ष्मण के व्यक्तित्व की एक बात बतायी गयी है, लक्षमण जी कहते हैं- मैं सीता माँ के कंगन के बारे में जानता और मैं कान की बालियों के बारे में भी नहीं जानता | मेरी दृष्टि कभी उनके पैरों के ऊपर गयी ही नहीं , मैं केवल उनकी पायल ही पहचान सकता हूँ | इस सर्वश्रेष्ठ नैतिक पारिवारिक आचरण को भारतीय समाज ने अपनी परंपरा से प्राप्त किया है जिसका अनुसरण प्रत्येक परिवार के सगे संबंधी करते हैं तथा एक साथ रहते हुए अपनी अपनी मर्यादा का भान सभी को सदैव रहता ही हैं| श्रेष्ठ आचरण और निश्वार्थ जीवनयापन और किसी अन्य के अधिकार पर स्वयं का दावा न करना ये भी महत्वपूर्ण जीवन मूल्य हैं, इनका प्रकटीकरण भी रामायण से देखने पर प्राप्त होता है| जब राम जी वनवास हुआ तब भरत जी उनको मनाने पहुंचे और उनसे आग्रह किया कि आप हम सभी भाइयों में परिवार में सबसे बड़े हैं और राजसिंहासन पर आपका ही अधिकार है , अतः आप अयोध्या लौट चलें और जब श्रीराम चन्द्र जी पिता की आज्ञा को मानने को अपना धर्म बताते हुए वापस जाने को मना कर देते हैं, तब भरत जी उनकी चरण पादुकाओं को सिर पर धारण करते हुए वापस आते हैं और स्वयं भी सभी राजसी सुविधाओं का त्याग करते हुए तपस्वी की भांति रहकर राज्य का संचालन करते हैं |

घटना त्याग और निस्वार्थ आचरण की पराकाष्ठा को प्रतिबिंबित करती है और न्यूनाधिक रूम में ये सभी नैतिक, चारित्रिक गुण आज भी भारतीय समाज में परम्परागत रूप से विद्यमान हैं | वेदों का अध्ययन करने पर भी हमें मिला कि-

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम् ॥

अर्थात- इस सृष्टि में जो कुछ भी है वह सब ईश्वर प्रदत्त है तथा उनके ही अधिकार में है हमें केवल उसके द्वारा हमारे उपयोग के लिए छोड़े गए भाग का ही उपभोग करना चाहिए तथा लालच नहीं करना चाहिए यह धन माया किसकी है किसी की नहीं सिवाय ईश्वर के | इस प्रकार त्याग का भाव हमें निश्वार्थ और वस्तुओं में आसक्ति रहित जीवन जीन की प्रेरणा देता है |

4. हमारी ज्ञान परंपरा और विश्व बंधुत्व:

विश्व के समस्त देशों के मध्य मानवीय संबंधो का विकास सभ्यताओं के पोषण के लिए आवश्यक हैं | हम वैश्विक संदर्भ में गहन शोध करते हैं तो पाते हैं कि हमारी परंपरा में सम्पूर्ण विश्व के बारे में अपनत्व भरा चिंतन है, सम्पूर्ण विश्व हमारा घर है ऐसा भाव हमारे परंपरागत चिंतन में निहित है| भारत की ज्ञान परंपरा के सबसे बड़े संवाहक वेदों में हमारी परिवार व्यवस्था एवं सामाजिक व्यवस्था पर अनुकरणीय

मार्गदर्शन दिया गया है | विश्व की समस्त सभ्यताओं के लिए जो बड़ी लाइन खींची गयी है वह है हमारा वसुधैव कुटुम्बकम का भाव | हमारा विचार निम्न श्लोक में परिलक्षित होता है-

अयं निजः परोवेति गणना लघुचेतसाम, उदारचरितानाम तु व सुधैव कुटुम्बकम

इसका आशय है- ये मेरा है ये पराया है ऐसा विचार छोटे ह्रदय वाले लोग करते हैं, विशाल ह्रदय वालों के लिए तो ये सपूर्ण पृथ्वी ही घर होती है | इसके सन्दर्भ में विश्लेषण करें तो यह निष्कर्ष निकलता है कि विश्व की शेष ज्ञान की शाखाओं में परिवार की संकल्पना अत्यंत संकुचित है वहां मानवीय संबंधों की कल्पना भी बहुत विस्तृत नहीं है, भारत की ज्ञान परंपरा में निम्न पंक्तियाँ स्पष्ट दृष्टिगोचर होती हैं

'वसुंधरा परिवार हमारा, हिंद का यह विशाल चिंतन,इस वैश्विक जीवन दर्शन से मानव जाति होगी पावन
अखिल विश्व के पथदर्शन की मुनिजन संतों की अभिलाषा,बन्धु भाव से सब जग जोड़ें वेद और गीता की भाषा'

भारत के वैश्विक चिंतन में ही इस संसार और मानव जाति का उद्धार है क्योंकि हमारे वेद ग्रन्थ , श्रीमद्भागवत गीता उपनिषद आदि ग्रंथों में इस प्रकार के विचारों पर बहुत अधिक जोर दिया गया है,

तैत्तरीय उपनिषद् कहता है-

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित् दुःखभाग् भवेत्।।

अर्थात सभी सुखी हों, सभी निरोगी हों, किसी को कोई कष्ट न हो, सभी शुभ घटनाओं के साक्षी बनें, इसमें मानव मात्र के कल्याण के लिए कामना की गयी है, और इसका जब विश्लेषण करें तो ये केवल मनुष्यों तक सीमित नही हैं, जब हम सभी के कल्याण की कामना करते हैं तो उसमें चराचर जगत समाया होता है | जब हम सर्वे भवन्तु सुखिनः कहते हिं तो हमारे ये कामना नही होती कि केवल मैं मेरा परिवार मेरा गाँव मेरा शहर या मेरा राष्ट्र सुखी हो बल्कि उसमें हमारा भाव ये होता है कि सम्पूर्ण जगत में जल थल नभ आदि कहीं पर भी रहने वाले सभी जीव सुखी हों और इस से आगे भी हम उनको भी सुखी देखना चाहते हैं, जिनमें प्राणवायु नहीं है अर्थात निर्जीव वस्तुएं भी सुखी हों ये कामना रहती है |

तथ्यों के आधार पर और भारत के लोगों की जीवन शैली के आधार पर जब इसका विश्लेषण किया जाये तो ये भारत के समाज जीवन में और लोकसंस्कृति में रचे बसे हैं ऐसा दिखाई भी देता है | हमारे यहाँ जब कोई त्यौहार आता है, तो जैसे घर में सभी तैयार होते हैं वैसे ही घर की चीजों को सजाया जाता है | भाई-बहिन आपस में राखी बांधते हैं तो हमारे बुजुर्ग कहते हैं कि जाओ अपनी साइकिल, स्कूटर या ऐसी ही कोई अन्य प्रिय वस्तु हो तो उसको राखी बाँध कर आओ | बिलकुल सजीवता का सम्बन्ध प्रकट होता है और तब ध्यान में आता है कि हमारी परंपरा में बताये गए जीवन मूल्य जनमानस के जीवन में घुल गए हैं | आज के भौतिकवादी युग में जब समूचे विश्व में चकाचौंध और स्वार्थलिप्तता छाई हुई प्रतीत होती है, ऐसे में भारत की उत्कृष्ट ज्ञान परंपरा के ये जीवन मूल्य विश्व के सभी समाजों में व्याप्त अराजक माहौल एवं नैतिक अधोगति को रोकने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं |

बंधुत्व एवं आपसी सहचर्य, सहयोग की कामना को करते हुए एक विचार मिलता है जो आपसी संगठन के भाव और मिलकर कार्य करने की भावना को जाग्रत करता है -

ॐ संगच्छध्वम् संवद्धवम् सं वो मनाँसि जानताम् ।
देवा भागम् यथा पूर्वे सञ्जानाना उपासते ।।
समानो मन्त्र: समिति: समानी समानं मन: सह चित्तमेषाम्
समानं मन्त्रमभि मन्त्रये व: समानेन वो हविषा जुहोमि ।।
समानी व आकूति: समाना ह्रदयानि व: ।
समानमस्तु वो मनो यथा व: सुसहासति ।।
।। ॐ शांति: शांति: शांति: ।।

इसके भावार्थ को पग से पग मिलकर चलो, स्वर से स्वर मिलकर बोलो, तुम्हारे मन में समय ज्ञान हो, पूर्व काल में जैसे देवों ने अपना भाग प्राप्त किया, एक साथ मिलकर बुद्धि से कार्य करने वाले उसी प्रकार अपना-अपना अभीष्ट प्राप्त करते हैं।

मिलकर कार्य करने वालों का मंत्र समान होता है, चित्त सहित इनका मन समान होता है। मैं तुम्हे मिलकर समान निष्कर्ष पर पहुंचने की प्रेरणा देता हूँ ,तुम्हें समान भोज्य प्रदान करता हूँ।

हम सभी के संकल्प एक समान हो ,हम सभी के ह्रदय की इच्छाएं एक समान हों, हम सभी के विचार एक समान हो जिनसे कि हम सब में पूर्ण समरसता आए |

उपरोक्त का विश्लेषण करने पर भारत की ज्ञान परंपरा के विश्व बंधुत्व के पक्ष को प्रतिबिंबित किया जा सकता है, भारत का विचार कभी विध्वंसात्मक नहीं रहा है | शक्ति का उपयोग सृजन के लिए हो ना की विध्वंस के लिए ये हमारी मान्यता है |

5. जीवन लक्ष्य और कर्तव्य पालन

बहूनि मे व्यतीतानि जन्मानि तव चार्जुन।
तान्यहं वेद सर्वाणि न त्वं वेत्थ परन्तप ॥ "

अर्थात-श्रीभगवान बोले- हे अर्जुन ! मेरे और तेरे अनेक जन्म हो चुके हैं; उन सबको मैं जानता हूँ, किंतु हे परंतप ! तू (उन्हें) नहीं जानता।

मान्यता है कि मानव जन्म प्राप्त होना पूर्व जन्मों का सुफल है तथा मानव जन्म का कोई न कोई एक निश्चित लक्ष्य अवश्य होता है जिसकी साधना व्यक्ति जीवन भर करता है, परन्तु अपने लक्ष्य की साधना में मनुष्य को केवल मनुष्यों ही नहीं बल्कि प्राणी मात्र के प्रति संवेदनाएं. सहानुभूति एवं अपनत्व का भाव रखना चाहिए, साथ ही स्वयं के कार्यों अर्थात कर्मों पर ध्यान देना चाहिए |

भगवद्गीता के दूसरे अध्याय के श्लोक 47 में योगेश्वर कृष्ण पार्थ को ज्ञान देते हुए कहते हैं कि वह परिणामों की आसक्ति के बिना अपने कर्तव्यों का पालन करे |

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन, मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि

इसका तात्पर्य है कि तुम केवल कर्म करो जिस पर तुम्हारा अधिकार है, उस कर्म के फल की चिंता मत करो कर्म को फल प्राप्ति की आसक्ति में नही करना चाहिए |

भारत की ज्ञान परंपरा का यह ज्ञान भारत के निवासियों के मन में फल आसक्ति को हटाने वाला है आज यह निरपेक्ष एवं निर्लेप भाव जगाने वाला है तथा हमारी मन की इच्छाओं का नियंत्रण करने वाला है साथ ही मानव मात्र के बीच आपसी प्रेम और सौहार्द को बढ़ाने के साथ ही वैश्विक स्तर पर समझ विकसित करने में उपयोगी है |

प्रकृति एवं पर्यावरण के प्रति भारत का चिंतन बहुत स्पष्ट एवं कल्याणकारी है, हमारी उपासना पद्धति में नवग्रह का उल्लेख है तथा कोई भी कार्य करने से पहले उनका स्मरण एवं उनकी शान्ति के लिए प्रर्थना की जाती है |

ॐ द्यौ: शान्तिरन्तरिक्षं शान्ति:
पृथिवी शान्तिराप: शान्तिरोषधय: शान्ति:।
वनस्पतय: शान्तिर्विश्वेदेवा: शान्तिर्ब्रह्म शान्ति:
सर्वं शान्ति:, शान्तिरेव शान्ति: सा मा शान्तिरेधि ॥
ॐ शान्ति: शान्ति: शान्ति: ॥

यजुर्वेद के इस शांति मंत्र में सृष्टि के समस्त तत्वों से शांति बनाये रखने की प्रार्थना है, हमारी ज्ञान परंपरा की जीवन दृष्टि में सम्पूर्ण प्रकृति को देवस्वरूप माना गया तथा शुभ अवसरों पर सबसे पहले प्रकृति का वंदन, सभी ग्रहों की शांति की और उनके द्वरा सभी के मंगल की कामना की जाती है |

भारत में प्रत्येक पुष्प , पौधे को देवताओं से जोड़कर उसको सम्माननीय बनाया गया है| उदाहरण के लिए पीपल के का वृक्ष जो जीवनपर्यंत प्राणवायु देता है उस पीपल के वृक्ष को पवित्र माना गया तथा उसको पूरे भारत में ब्रह्मदेव के नाम से पूजा जाता है और ब्रह्मा की तरह ही सृष्टि का निर्माता माना जाता है | महाभारत में वृक्षों को धर्म का पुत्र बताया गया है, महाभारत के आदि पर्व में बताया गया है कि यदि ग्राम में एक भी पेड़ पुष्पों एवं फलों से युक्त हो तो वह ग्राम मंदिर के समान पूज्य है |

केन उपनिषद् में कहा गया है कि वन ब्रह्मा हैं और ब्रह्मा ही परमपिता हैं, इसी प्रकार रामायण में राम के वन गमन के समय का एक अनुपम उदहारण है कि जब सीता जी श्रीराम जी के साथ वन गमन करते समय जब वह नदी को पार करती हैं तो वह मनोकामना के लिए वट के वृक्ष को ही देव मान कर पूजा करतीं हैं-

न्यग्रोध समुपागय वैदेही चाभ्यवन्दत।
नमस्तेऽस्तु महावृक्ष पारयेन्मे पतिव्रतम्।।
कौसल्यां चैव पश्येम सुमित्रा च यशस्विनीम्।
इति सीतांजलिं कृत्वा पर्यगच्छन्मनस्विनी।।"

अर्थात वह कहती हैं कि हे! महावृक्ष मैं आपको बारम्बार प्रणाम करती हूँ और आपकी कृपा से मेरे पति की वनवास कि प्रतिज्ञा सकुशल संपन्न हो | ज्ञान परंपरा से प्राप्त प्रकृति के प्रति ऐसा आत्मीय भाव हमारे सामान्य जनमानस के जीवन आज भी दिखाई देता है|

गीता में भी भगवान् कृष्ण ने कहा है-

अश्वत्थः सर्वृक्षाणा देवर्षीणा च नारदः|
गंधर्वाणा चित्ररथः सिद्धानां कपिलो मुनिः ||

गीता के इस श्लोक भगवान कृष्ण ने पीपल के वृक्ष की महिमा का उदहारण देते हुए स्वयं को प्रस्तुत किया है |इसी प्रकार पर्यावरण के लिहाज से इसी प्रकार के अन्य औषधियां पेड़ हैं उनको अलग अलग तरह से बचाने और संरक्षित करने का भाव भारतीय परंपरा में है| हमारी लोक मान्यताओं ने नदियों के साथ मातृभाव जोड़ा है और पशु-पक्षियों को देवी-देवताओं के वाहन इत्यादि के साथ जोड़कर उनके लिए समाज में सम्मानजनक दृष्टि विकसित करने का कार्य किया है साथ ही जानवरों के प्रति हमने आत्मीय भाव जगाते हुए उनसे कुछ गुणों को सीखने का प्रयत्न किया |

जीव जंतु एवं जानवरों को भी अपने लिए सीखने का माध्यम मानने वाली हमारी परंपरा निश्चित ही शेष विश्व के लिए एक अनुपम उदहारण प्रस्तुत करती है | ये विचार हमारे लोकसंस्कृति में रचे बसे हैं इसलिए जीव मात्र पर दया करने का हर भारतीय का मन का भाव उत्पन्न हुआ है | हमारे व्रत, पर्व, त्यौहार पर्यावरण एवं जीव जंतुओं के संरक्षण का भाव पैदा करते हैं दुनिया में शायद ही कोई अन्य देश हो जहाँ विषधर की पूजा की जाती हो, जहाँ नदियों के किनारे आस्था के मेले लगते हों जहाँ पति की दीर्घायु कि कामना लिए माताएं वट वृक्ष की पूजा-आरती करती हों, छठ पूजा जो सबके मंगल की कामना करती है तथा जिसमें नदियों तथा सूर्य की उपासना की जाती है, जहाँ पीपल जैसे साधारण परन्तु पर्यावरण की दृष्टि से श्रेष्ठ वृक्ष को साक्षात सृष्टि के सृजनकर्ता ब्रह्मदेव की उपाधि दी गयी हो| इसका कारण है हमारी परंपरा और संस्कृति में अन्तर्निहित जीवनमूल्य | इस सबको जीवन जीने की गतिविधियों के साथ जोड़ा गया ताकि हम प्रकृति के निकट रहकर उसके साथ आत्मीय भाव के साथ रह सकें और भारत का समाज रहता भी है|

शोधपत्र में संकलित तथ्यों के आधार पर हम कह सकते हैं कि हमारी ज्ञान परंपरा सामाजिक मान्यताओं के अनुकूल जीवन जीने के लिए एक दृष्टि विकसित करती है | यह भविष्य के शोध का विषय है कि हमारी ज्ञान परंपरा दुनिया की सर्वश्रेष्ठ परंपरा है अथवा नहीं परन्तु इतना अवश्य ज्ञात होता है कि भारतीय ज्ञान परंपरा सर्वश्रेष्ठ परम्पराओं में से एक है| पारिवारिक जीवन के आदर्श हों या सामाजिक संबंधों के ताने-बाने, इन सबके लिए एक मार्गदर्शक दृष्टि युगानुकूल परिस्थियों में विकसित हुई है तथा उसके आधार पर बुराई पर अच्छाई की जीत, सत्यमेव जयते, अहिंसा परमो धर्मः, वसुधैव कुटुम्बकम, तू मैं एक रक्त, सर्वे भवन्तु सुखिनः जैसे सकारात्मक जीवन दृष्टि उत्पन्न करने वाली सूक्तियां साधारण दिखने वाली परन्तु असाधारण परिवार परम्परायुक्त जीवन एवं लोकसंस्कृति में रच बस गयीं हैं |

वर्तमान विकास के युग में जब सम्पूर्ण विश्व में चारों तरफ चकाचौंध से मनुष्य भौतिकवाद में फंसा हुआ है, तथा मानव जीवन के मूल्यों का क्षरण होता जा रहा है, तब भारतीय ज्ञान परंपरा एक नव अरुणोदय का स्वर्ण विहान सिद्ध होगी तथा इसको आत्मसात करने के फलस्वरूप हम अपने नैतिक, चारित्रिक, सामाजिक, व्यावसायिक मूल्यों के साथ अपने व्यक्तिगत चरित्र एवं मूल्यों का दृढीकरण करने में सफल होकर अपने जीवन को सार्थक एवं लोकोपकारी बनाने की ओर प्रवृत्त हो सकेंगे |

सन्दर्भ ग्रन्थ:

1. नाहीद आबिदी. 2022. वर्तमान सन्दर्भ में वैदिक मूल्य. राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, नयी दिल्ली. पृष्ठ 28, 29.
2. श्रीमद्भाग्वात्गीता. संवत 2081. गीता प्रेस, गोरखपुर.अध्याय 4, श्लोक 5. अध्याय 10 श्लोक 26.
3. टायलर, एडवर्ड बी. 1871/1958. प्रिमिटिव कल्चर रिसर्च ऑन टू द डवलपमेंट औरू मायचोलोजी, फिलासफी रिलिजन, आर्ट एंड कस्टम 2 वॉल्यूमस, वाल्यूम ।: ओरिजन ऑफ कल्वर, वाल्यूम : 2 रिलिजन इन प्रिमिटिव कल्चर, मास स्मिथ, ग्लूकास्टर)
4. तुलसीदास.रामचरितमानस. 'उत्तरकाण्ड' (सं. 1631)
5. महर्षिवाल्मीकिप्रणीत श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण, गीता प्रेस, गोरखपुर सर्ग 6, श्लोक २२. retrieved from https://www.valmiki.iitk.ac.in/content?language=dv&field_kanda_tid=4&field_sarga_value=6&field_sloka_value=22
6. महोपनिषद, अध्याय 6, श्लोक 71. retrieved from, https://www.shdvef.com/wp-content/uploads/2020/01/%E0%A4%AE%E0%A4%B9%E0%A4%BE-%E0%A4%89%E0%A4%AA%E0%A4%A8%E0%A4%BF%E0%A4%B7%E0%A4%A6.pdf
7. ऋग्वेद 10.191 retrieved from, https://archive.org/details/rigveda-hindi-dr-ganga-sahay-sharma
8. शांति पाठ , यजुर्वेद श्लोक 1889. retrieved from https://archive.org/details/Yajurved/page/n349/mode/2up
9. यजुर्वेद श्लोक 1959. retrieved from https://archive.org/details/Yajurved/page/n349/mode/2up